श्रद्धा

(ले० श्री० सूरजदेवी ॥)

भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ॥

मैं श्रद्धा और विश्वास के स्वरूप महादेव, पार्वती को प्रणाम करता हूं कि, जिस श्रद्धा विश्वास के बिना सिद्ध लोग समाधि में स्थित होजाने पर भी ईश्वर का दर्शन नहीं कर पाते । अतः उसी श्रद्धा विश्वास को मुख्य लक्ष्य रख कर हम भी किंचित् विचारते हैं । आत्म सत्तामय होना मनुष्य का प्रथम, और मुख्य कर्तव्य है । इसी कर्तव्य को पूर्ण करने के लिये मनुष्य का हृदय परम श्रेष्ठ विशुद्ध श्रद्धा युक्त होना चाहिये । गुरु वाक्य तथा वेदशास्त्र पर श्रद्धा यही शुभ फल दाता है अतः सत्यपदार्थ तथा गुरु वाक्य पर श्रद्धा आवश्यकीय है । प्रापंचिक, तथा सांसारिक कार्यों में भी विशेष श्रद्धा पर ही आधार रखना पड़ता है । जब लौकिक कार्यों में भी श्रद्धा की अत्यन्त आवश्यकता है फिर भला भक्ति, उपदेश तथा पारमार्थिक कर्तव्यों में मनुष्य को श्रद्धा का आधार रखना पड़े तो आश्चर्य ही क्या ? किसी ने कहा है "विश्वास लंगर है बिना लंगर जहाज नहीं ठहर सक्ता" हम देखते हैं कि जिस पोत का लंगर डाला हुआ होता है वही जहाज अपनी जगह पर ठहर सक्ता है । उसे वायु इधर उधर नहीं हिला सकता । इसी भांति जिस मनुष्य का गुरु तथा ईश्वर पर विश्वास होता है जिस मनुष्य का अटल विश्वास रूपी लंगर फैंका हुआ होता है, वह भिन्न २ विचारों में पड़ कर कल्पना जाल में नहीं पड़ता है । उसकी बुद्धि तथा उसका मन चंचल हो कर उसको प्रपंच में नहीं डाल सक्ता । परन्तु जो विश्वास से रहित हैं वे बिना लंगर के जहाज की भांति जन्म मरण, ऊंच नीच योनियों में चक्कर लगाते भटकते फिरते हैं । श्रद्धा रहित कोई शुभ कार्य नहीं होता । अतएव मनुष्यों को गुरुवाक्यों तथा शास्त्र वाक्यों पर श्रद्धा रखनी चाहिये । वैसे तो गुरु वाक्य तथा वेद शास्त्र के वाक्य एक ही हैं । श्रुति तो गुरु वाक्य हैं और गुरु तथा वेद शास्त्र मनुष्य के कल्याण का मार्ग दर्शाते हैं । सद्गुरु ने कहा कि हे शिष्य ! तू अमुक मंत्र का जप किया कर, इसके जप करने से तुझे प्रत्यक्ष ईश्वर के दर्शन हो जायंगे । यदि शिष्य इन वाक्यों पर पूर्णतया विश्वास रख चित्त को स्थिर कर पूर्ण प्रेम से जप करता है, तो निःसन्देह उसको गुरु देव के कथनानुसार ईश्वर के साक्षात्कार दर्शन होंगे । परंच इसके विपरीत अपने प्रभु के वाक्यों पर संदेहान्वित होकर यदि अश्रद्धावान् होता है तो वह अपने अभीष्ट से पिछड़ निराशत्व को प्राप्त होगा । वह सोचता है कि "गुरु जी कहते हैं कि, इस छोटे से मंत्र के जपने के प्रभाव से ईश्वर के प्रत्यक्ष दर्शन होंगे यह बात कहां तक सत्य है, यदि निःसंदेह सत्य होती तो न मालुम इस मंत्र को जप कर किस किस के भाग्य उदय होते, साक्षात्कार दर्शन होता ? क्या परमेश्वर मुझे

दर्शन देंगे ? परमात्मा ने किस २ को दर्शन दिये हैं जो मुझे देंगे ? ऐसे ही मंत्रों से ईश्वर के दर्शन होते तो सब ही को हो जाते ! परन्तु फिर भी मन्त्र जपलेना चाहिये, देखें क्या २ प्रभाव हमारे दृष्टिगोचर होता है'' । भला ऐसे निश्चय से क्या दर्शन होते हैं ? अश्रद्धालु को जो फल मिलता है वही दशा उसकी होती है और लाभ से वंचित रह जाता है ।

अश्रद्धा सर्वत्र और सर्वदा बाधक है अतः त्याज्य है । द्वापर युग के अंत में श्रीकृष्णावतार श्रीहरिने युद्ध के समय जो उपदेश दिया है उसमें कहा है कि,
"संशयात्मा विनश्यति''
"अविश्वासो न कर्तव्यः सर्वदा बाधकस्तु सः ।''
संशयात्मा वाला नाश को प्राप्त होता है ।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ।

संशयात्मा वाले को न इस लोक में सुख है न परलोक में सुख होता है । तात्पर्य यह है कि बारम्बार संशय करने वाला मनुष्य किसी एक निश्चय पर नहीं टिक सक्ता । क्योंकि यह जिस विषय पर विचारता है उसी में सत्य झूठ का संशय कर लेता है । बस ! फिर फिसल जाता है और ऐसे मनुष्य से कोई भी सत्साधन नहीं बन सक्ता । प्रत्युत कष्ट ही पाता है । इससे गुरु वाक्य पर तथा और कार्यों में भी निरा श्रद्धालु होना चाहिये । मेरा कथन विशेष तथा सद्गुरु के वचन पर श्रद्धा रखने के लिये है । अश्रद्धालु चाहे जितना यत्न करे परन्तु कृत्कार्य नहीं होता । इस विषय पर कितने ही सांसारिक तथा व्यावहारिक दृष्टान्त मिलते हैं ।

बच्चा जब कि प्रथम बिलकुल सब विद्याओं से अनभिज्ञ तथा अज्ञान होता है तो उसको विद्वान् तथा दक्ष बनाने के लिये पढ़ाया जता है । उस समय अध्यापक पट्टी पर अथवा सलेट में "अ'' यह अक्षर लिख कर देता है और कहता है कि, बोल "अ'' । तब यदि वह बिना विचारे अध्यापक पर विश्वास कर लेता है कि, निःसन्देह जो यह कहते हैं यह "अ'' ही है और उसके वचनों पर श्रद्धा रखकर पढ़ता चला जाता है तो वह सम्पूर्ण विद्या पढ़ कर विद्वान् बन जाता है । विद्वान् ही नहीं बल्कि जिस दावे से अध्यापक ने कहा था कि बोल यह "अ'' है उसी दावे से वह दूसरों को विश्वास दिलाता और कहता है कि, यह अक्षर "अ'' है । इसका तात्पर्य प्रत्यक्ष है । यह साधारण दृष्टांत है दार्ष्टान्त यह है कि जो गुरु वाक्य पर इसी बालक की भांति अपनी चीं चपट छोड़ श्रद्धा विश्वास रख कर उनकी आज्ञानुसार कार्य करता है वह स्वयं पूर्ण तथा ईश्वर को जान औरों को भी ईश्वर दर्शन कराने के योग्य हो जाता है । जैसे कि बच्चा अध्यापक पर विश्वास रख कर सब अक्षरों को पढ़ता चला जाता है और फिर दूसरों को पढ़ाता है । परंतु इसके विपरीत यदि वह अध्यापक से कहता है कि इसे मैं "अ'' क्यों कहूं क तथा च, म अथवा अन्य और ही क्यों न कहूं ? मुझे क्या पता यह "अ'' है ? मैं क्योंकर जानूं कि यह अ है ? मैं तो इसे "अ'' नहीं कह सक्ता । इस प्रकार वह अपने गुरुके वचन न मानने से औरों को तो क्या पढ़ावेगा स्वयं ही अनपढ़ तथा

मूर्ख रह जावेगा और दुनियां के मूर्खों में शुमार हो कर यश कीर्ति तथा सुख से रहित होगा । फिर आप ही विचारो कि जो मूर्ख तथा अश्रद्धालु है उसको परलोक में शुभ गति कैसी ? क्योंकि बिना श्रेष्ठ जनों की बात का विश्वास किये कुछ भी नहीं प्राप्त हो सक्ता है । जब एक साधारण जनके और साधारण विद्या के जानने में अश्रद्धा इतनी बाधक है तो पाठक विचारिये कि सर्वोत्तम भगवत्प्राप्ति विषय ईश्वर रूप श्री गुरुदेव के वाक्यों पर विश्वास न रक्खे उसका कल्याण क्योंकर और कैसे हो सक्ता है ? विचारवान् पाठक अपने हृदय में इसे बिना लिखे ही अनुभव करलेंगे ।

आप समझ गये होंगे कि श्रद्धा कितना आवश्यकीय कर्तव्य है । श्रद्धा बिना सुख से व्यवहार भी नहीं सिद्ध हो सक्ता है अतः समझ में आया कि श्रद्धा विश्वास ही कल्याण का कारण है श्रीभगवान् भी भगवद्गीता में कहते हैं । यथा —

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥

श्रद्धा वाला जितेन्द्रिय पुरुष तत्परायणी याने सर्व भाव से उस ज्ञान के ही अभ्यास में लगे रहने वाला होने से उस ज्ञान को शीघ्र पाता है और ज्ञान को पाकर शीघ्र परम शान्ति को प्राप्त होता है ।

सत्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥

हे भारत ! सम्पूर्ण देहधारियों की अन्तःकरणानुकूल श्रद्धा होती है यह पुरुष श्रद्धामय है जैसी जिसकी श्रद्धा होती है वह वैसा ही हो जाता है । भगवान् कहते हैं :—

श्रद्धा विरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ।

श्रद्धा से रहित किया गया यज्ञ तामस यज्ञ कहलाता है । तात्पर्य यह है कि, यज्ञ मनुष्यों को सद्गति देने वाला है परन्तु श्रद्धा युक्त हो तब शुभ फल दायक है । अश्रद्धा से किया हवन दान, तप भजन आदि सत्कर्म भी केवल प्रयास मात्रही हैं । अतः गुरु वाक्य तथ सत्कर्म पर श्रद्धा अवश्य होनी चाहिये । इस विषय में महादेव जी से पार्वति जी ने प्रश्न किया था कि "हे देवादिदेव ! इस जगत् में आपका भजन पूजन करने वाले तो बहुत देखती हूं परंतु आपको प्राप्त होते हुये बिरले ही देखती हूं, इसका क्या कारण है ? जो आपका भजन पूजन करेंगे वह आपको प्राप्त तो अवश्य ही होंगे इसमें तो संदेह नहीं । यह सुन श्रद्धामय शंकर ने कहा हे सती ! तुमने जो कहा सो तो ठीक है, परन्तु मेरे भक्त जनों में बहुत भेद है । जो सबसे अधिक दृढ़तम श्रद्धा वाले होंगे मुझको वही प्राप्त होंगे अन्य नहीं । " तब उमा ने कहा कि "हे नाथ ! मैं आपके दृढ़तम भक्तों को देखना चाहती हूं वे कैसे होंगे, महादेव जी ने कहा — प्रिय ! भक्त का पार लेने में सार नहीं" परंतु किसी दिन तुम्हारी इच्छा पूरी करदी जावेगी" । इस बात को कितने ही दिन व्यतीत हो गये । बसन्त ऋतु में महाशिव रात्रि का दिन आया । इस दिन

महादेव जी का उत्सव मनाया जाता है । सृष्टि लीला कुछ अद्भुत दृश्य दिखारही थी । जहां देखो वहीं शिवालयों पर धूमधाम से सजावट की तय्यारियां हो रही थीं ध्वजा पताकाओं की भरमार थी । शिव भक्त मनभर आज दिन शिवजी का शृंगार करते हैं । परंतु क्या करें शिवजी तो अन्य ठाकुर मूर्तियों की भांति हाथ पैर वाले नहीं हैं, किन्तु वे तो विकार रहित इन्द्रियों के अर्थों तथा इन्द्रियों से रहित हैं, केवल निराकार हैं । भक्तों को सहारा देने के लिये एक पिंड कीसी आकृति धारण करली है । अतः भक्तों ने विचश होकर शिव मन्दिरों को तथा भैरवादिगणों के मन्दिरों को सजाना आरम्भ कर दिया था । यत्र तत्र घण्टे घनन २ की ध्वनि कर रहे थे । क्या बाल, क्या वृद्ध क्या युवा सब ही तृपुण्ड लगाये हुये थे, मुख से हर २ शम्भो ! पार्वती पते ! , कैलाश पते ! , गिरिजा पते ! हर २ शिव २ की ध्वनि गूंज रही थी । सब ही महादेव के रंग में रंगे हुये दिखलाई देते थे । ब्राह्मण लोग बारंबार शिव के प्रसन्नार्थ रुद्री की आवृत्तियां कर रहे थे । कोई २ षोडशोपचार से पूजा कर रहे थे, शिव लिंग पर अखण्ड जल धारा चढ़ रही थी, मानो आकाश में छिद्र करके इंद्र ने मूसलाधार वर्षा की हो । कोई बिल्वपत्र कोई चन्दन पुष्प, धूप, दीप नैवेद्य दे रहे थे, कहीं कर्पूर की आरती हो रही थी, कोई भक्त निष्ठ केवल नमस्कार ही करते थे, कोई बंबं का नाद कर रहे थे, कोई नाच रहे थे, किसी २ ने अपने हाथ के ऊपर शिव लिंग की स्थापना कर रक्खी थी अतः उस हाथ को ऊपर उठा रक्खा था जो सूख कर लकड़ी होगया था । अधिक क्या वाराणसी पर जाने वाले शिव भक्त वहां का अद्भुत् दृश्य जानते ही होंगे अधिक लिखने से लेख का कलेवर बढ़ जायगा । काशी जी में जो शंकर का निवास स्थान है वहां ऐसी शोभा तथा दृश्य था मानो यह साक्षात् शिवपुरी है, और ये भक्त लोग शिव गण हैं । अधिक भीड़ के कारण विश्वनाथ के दर्शन दुर्लभ हो रहे थे । ऐसा सुअवसर देख महादेव जी ने पार्वती जी को कहा कि हे गिरिनन्दिनी ! यदि उस दिन की इच्छा पूरी करनी हो तो आज मेरे साथ चलो । पार्वती जी तुरंत शंकर के साथ चलदीं । जब महादेव पार्वती वाराणसी के समीप पहुंचे तो शिव ने स्वयं एक वृद्ध, अशक्त पुरुष का रूप धारण किया और पार्वती जी षोडश वर्षीया सुकुमारी युवति बनी । नन्दी भी वृद्ध बैल बनगया । इन्होंने भी अन्य भक्तों की भांति मणिकर्णिका पर स्नान किया और एक घट भर कर विश्वनाथ के दर्शन को चले । रास्ते में हरये नमः, शिवाय नमः, उमापति, आदि महादेव के नामों की गर्जना हो रही थी । और सब लोग दर्शनोत्कण्ठा से शीघ्रता से चले जा रहे थे । शैलराजकुमारी ने जब यह दृश्य देखा तो मन में विचारा कि महादेव जी तो कहते थे कि श्रद्धा वाले निष्ठावान् भक्त बिरले हैं परंतु मैं तो सैकड़ों निष्ठावान् श्रद्धालु भक्त देखती हूं ! क्या ये शंकर को प्राप्त नहीं होंगे ? महादेव ने अन्तर्यामित्व से जान कर कहा कि, देवी ! धीरज धरो भक्त की परीक्षा अभी होती है । पार्वती जी महादेव के आगे २ धक्के मुक्के खाते चल रही थी । उस समय ऐसी भीड़ थी कि अकेले हृष्ट पुष्ट मनुष्य का निकलना कठिन था । जैसे तैसे पार्वती जी बैल की डोरी पकड़े आगे २ चल रही थी, महादेव जी वृद्ध, जर्जर तीन टांग वाले बैल पर बैठे हुये थे लोग इनको देख २ कर हंस रहे

थे । कोई २ दयावान् कहते थे कि बहन तुम भीड़ से बाहर २ चलो इस तरह चलते २ कीचड़ से भरा हुआ एक गढ़ा आया । शंकर ने पार्वती को उसी तरफ खड्डे की तरफ) चलने का इशारा किया । पार्वती नन्दी को उसी तरफ ले गई । बैल डगमग २ करता पीछे २ चला जाता था, इतने में उसका पांव फिसल गया और वह और बुड्ढा शंकर धड़ धम करते हुए गढ़े में गिर पड़े । यह देख कर कितने ही लोग तो खिल खिला कर हंस पड़े और कितनों को ही दया आई, वे निकालने चले ! पार्वती मार्ग के लोगों को पुकारने लगी "अरेरे मेरे वृद्ध पति को दया करके कोई निकालो ।" दैव योग से उस गड्ढे में दलदल थी बैल और बुड्ढा जितना निकलने का प्रयत्न करते थे उतना ही दलदल में नीचे को फंसते जाते थे । पार्वती के पुकारने से तथा कोई २ दया से द्रवीभूत होकर जो २ लोग आये थे उनसे शंकर ने कहा कि "भाइयो मेरे निकालने में तुम्हारी प्राण हानि हो यह ठीक नहीं । अतः जो मनुष्य शंकर का अनन्य भक्त हो, दृढ़ श्रद्धा वाला हो वही मुझे निकाल सक्ता है इसके विपरीत संशयात्मा वाला मुझे स्पर्श करते ही भस्म हो जायगा इसमें सन्देह नहीं ।" यह सुन कर लोग चलते बने और कहने लगे देखो दया करके बुड्ढे को निकालें तो स्वयं जल कर भस्म हो जांय "धर्म करते कर्म फूटे" भाई कैसे भी समझ कर बाहर निकालें परंतु अपने मन का तो भरोसा नहीं । कौन जाने कैसा संकल्प विकल्प उठ जाय ! कैसी भी श्रद्धा रक्खें आखिर रहते तो हैं परिणाम (तब्दीली) वाली दुनिया में । अत्यन्त निष्ठावान् कैसे हो सक्ते हैं । शंकर ने कोई कार्य सिद्ध नहीं किया होगा तो बुरा भला भी मन में आया होगा । अतः हम तो इस बुड्ढे को स्पर्श नहीं कर सकते । ऐसी तर्कना करते हुए चले गए । कोई २ तो निन्दा भी करने लगा कि, कितना बुड्ढा है और कैसी नव यौवना सुंदरी ले रक्खी है । तब देवेश ने देववाणी में देवीसे कहा कि, देवी देखा ये मेरे भक्त हैं, जो साक्षात् तरण तारिणी भागीरथी में स्नान करते हैं मुख से शिव २ उच्चारण करते हैं ! कोई तो हर २ शिव २ के अतिरिक्त कोई शब्द नहीं बोलते हैं तथा अन्य भी कई क्रियायें भक्त बनने की करते हैं ! तो क्या ये श्रद्धा रहित मुझ को पा सक्ते हैं ? कदापि नहीं । परंतु धीरज रक्खो कोई निष्ठावान् भक्त भी निकलेहीगा, वसुंधरा नितांत शून्य भी नहीं है । भक्त लोग पूर्ववत् अब भी स्नान करके तथा कोई स्नानार्थ चले जा रहे हैं । पार्वती जी जिस प्रकार यात्रीगण सुने पुकार पुकार कर कहरही थी, अरे पुण्य संचय करने वालो ! शिव भक्त तुम सब स्नान मात्र से पवित्र हुए विश्वनाथ का दर्शन करते हो, मुझ अबला पर दया करके मेरे वृद्ध पति को निकालो । अरे मैं दयामात्र की याचना करती हूं धन दौलतकी नहीं । ऐसे कातर तथा करुणोत्पादक शब्द सुनकर शिव भक्त आये और शंकर को निकालने लगे, त्यों ही बाबा शंकर ने वही बात कही "कि जो शिवभक्त श्रद्धालु संशयात्मा से रहित है वही निकाल सकेगा अन्यथा स्पर्श करते ही भस्मीभूत हो जायगा" । महादेव के यह वचन सुन कर सब कानों पर हाथ रखकर चल देते हैं, और वृद्ध को भांति २ के ताने देते हैं । वे नहीं जानते कि हमारी परीक्षा के लिये ही यह दलदल में बुड्ढा कसौटी रूप है ।

संसार में इसी भांति अश्रद्धालु जीव विमूढ हो माया जाल में फंसते चले आये हैं और फसेंगे । प्रातः काल से लेकर तीसरे पहर तक पार्वती जी चिल्लाती रहीं । चिल्लाते २ कण्ठ सूख गया, गला बैठ गया, रोते २ नेत्र लाल हो गये ! इधर वृद्ध नादिये का भी बुरा हाल था बिचारे का हांफते २ झागों से मुंह भर गया, आंखें बाहर निकल आई । परंतु ऐसी दशा में कोई पूर्ण शिव भक्त उन को निकालने वाला नहीं आया । तो पार्वती जी घबराकर कहने लगीं कि, हे प्रभो ! अब तो दया करो और कैलाश को चलो मैं ऐसे अश्रद्धालु और निर्दई लोगों में क्षण भर भी नहीं ठहरना चाहती हूं ।

तब महादेव जी ने कहा देवी ! धैर्य धरो कोई न कोई पूर्ण श्रद्धालु भक्तभी आवे हीगा । मनुष्यों का आना जाना कुछ कम हुवा । पार्वती जी की चिल्लाहट जारी थी, बूढ़े शंकर भी कीचड़ में कांप रहे थे । इतने में एक झुंड सचैल स्नान करके विश्वनाथ के दर्शन को जा रहा था । उस झुंड ने पार्वती जी का हृदय द्रावक करुण क्रन्दन सुना और उधर ही मुड़ा । परंतु वृद्धने वही अपनी प्रतिज्ञा कह सुनाई । "भाइयो ! धीर धरो अति साहस न करो मेरी बात सुनो, पूर्ण निष्ठावाला शिव का अनन्य भक्त ही मुझे स्पर्श कर सकता है, अन्यथा वह भस्मसात् हो जायगा " । यह सुनतेही सब घबराये और पीछे हटकर और खड़े हो गये । बस फिर क्या था बहुत से मनुष्यों को देख वहां बहुत भीड़ जमा हो गई । इस भीड़ में से एक पागल सा हृष्ट पुष्ट मनुष्य जिस को कि इस झुंड के तथा ग्राम के लोग उन्मत्त कहते थे आया, और शिवजी से बाहर निकालने को हाथ बढ़ाने के लिए कहा । बुड्ढे ने कहा, मेरी बात तो तू ने सुन ही ली है अतः विचार कर कार्य कर । नहीं तो जीव, और लाज दोनों देनी पड़ेगी । तब वह पुरुष बोला "महाराज ! आप वृद्ध होने पर भी ऐसी मिथ्या शंका करके मुझे क्यों भरमाते हो । यह लोग तो मूर्ख हैं परंतु आप भी ऐसा कैसे कहते हैं ! हे ब्रह्मदेव ! सब वेदों का अर्थ प्रदर्शित करने वाले, जगत् को दृढ़ नियम में बांधने वाले धर्मशास्त्रों की अवहेलना मैं कैसे कर सकता हूं । शास्त्रों की आज्ञा अनिवार्य है । शास्त्र में श्रीगंगा जी को त्रैलोक्य पाविनी, तरण तारिणी, सर्व पाप विनाशिनी कहते हैं । भगवती भागीरथी ने भूलोक में अवतरते ही साठ हजार सगरके पुत्रोंका उद्धार किया है । अब भी लाखों का उद्धार करती है । अतः महापर्व के दिन श्रीगंगा में स्नान करके आ रहा हूं फिर भला मेरे अंदर पाप का लेश मात्र कैसे रह सकता है ! कदापि नहीं । हर २ कैसे अधर्म की बात ! त्रिभुवन तारिणी विपापा गंगा पर ऐसा अविश्वास और आक्षेप ! क्या मैं श्रद्धालु तथा शिव पर पूर्ण निष्ठावान् नहीं ! मुझे तो केवल श्री शिव जी का ही भरोसा है । वे ही प्रतिज्ञा रक्खेंगे । मैं शुद्ध चित्त से कहता हूं मैंने एक काशी विश्वनाथ के सिवाय किसी पर श्रद्धा नहीं रक्खी है । फिर मुझे डर काहे का ? लाओ जल्दी हाथ बढ़ाओ मुझे देर होती है । मैं निष्पाप हूं, गंगा में स्नान करके आया हूं । भगवान् का नाम उच्चारण करनेसे क्या कोई पापी बन सकता है ? कदापि नहीं । उसकी ऐसी घोषणा सुन कर पार्वती स्तब्ध हो गई । वृद्ध शंकर ने कहा धन्य है २ तू ही पूर्ण श्रद्धा वाला

और सचमुच निष्पाप है । गंगा तथा विश्वनाथ के नाम का महात्म्य सार्थक करने वाला तू ही है और तो यह सब घंटा बजा कर बं बं कर व्यर्थ ही परिश्रम उठाते हैं । ये अविश्वासी तेरी भी महिमा नहीं जानते हैं । परंतु क्या चिंता तू तो निस्पृह है तू परम दुर्लभ पद को प्राप्त हो । ऐसा कह कर वृद्ध ने हाथ ऊपर को बढ़ाया, निष्पाप यात्री पकड़ने को झुका, तत्क्षण वह वृद्ध बैल तथा वृद्ध और सुंदरी अदृश्य हो गये । यह महान् आश्चर्य देख कर सब विस्मित हो गये और उस भक्त के चरणों में बारंबार वंदना करने लगे और कहने लगे यह वृद्ध पुरुष प्राकृतिक पुरुष नहीं किंतु स्वयं परमात्मा था । अरे हमें धिक्कार है । इस भक्त के प्रसाद से भगवान् ने रूपान्तर में दर्शन दिये परन्तु हम भाग्यहीन नहीं समझ सके । ऐसा कह किसी ने तो गड्ढे की मिट्टी मस्तक पर लगाई कोई सारे शरीर पर मलने लगा । परन्तु अब पीछे पछताने से क्या हो सकता था ।

अब पछताये होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत ।

कैलाश पर जाते हुए भोलानाथ ने पार्वती जी से कहा देवी ! तू ने मेरे दृढ़ विश्वासी भक्त को देखा, कैसा पूर्ण निश्चय वाला था उस के समान किसी और शिव भक्त की धारण न थी और तो केवल बाह्य भक्ति का आडंबर करते थे । श्रद्धा रहित भक्त मुझे कदापि नहीं प्राप्त हो सकता । हे देवी ! यदि ऐसे यह सारे भक्त मुझ को प्राप्त होने लगें तो फिर संसार में प्रपंची कौन रहे । इन वचनों से पार्वती जी के मन समाधान पूरा २ हो गया । और वे समझ गई कि केवल बाह्याभ्यान्तर की भक्ति से भगवत्प्राप्ति नहीं हो सकती किंतु भगवान् गुरु में पूर्ण श्रद्धा होनी चाहिये । श्रद्धा विश्वास के बिना किसी भी मतमतान्तर का कार्य सिद्ध नहीं हो सकता । वेद शास्त्र तथा गुरु के वचनों पर श्रद्धा रखना ही मुक्ति का खुला हुआ द्वार है । भगवत्प्राप्ति के दश नियमों में दूसरा नियम है कि, सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रक्खे ।